

सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय ,अल्मोड़ा,उत्तराखंड

प्राचीन एवं भक्तिकालीन काव्य

बी०ए०प्रथम वर्ष
प्रथम सेमेस्टर

पेपर प्रथम
Unit II



विषय लेखक

डॉ० वंशीधर उपाध्याय और पंकज पुंडीर असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी) ,राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय मुनस्यारी, पिथौरागढ़,उत्तराखंड



भक्तिकाल का उद्भव और विकास

हिंदी साहित्य के इतिहास में भक्ति काल महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आदिकाल के बाद आये इस युग को 'पूर्व मध्यकाल' भी कहा जाता है। इसकी समयावधि 1375 वि.सं से 1700 वि.सं तक की मानी जाती है। यह हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ युग है जिसको जॉर्ज ग्रियर्सन ने स्वर्णकाल, श्यामसुन्दर दास ने स्वर्णयुग, आचार्य राम चंद्र शुक्ल ने भक्ति काल एवं रामविलास शर्मा ने लोक जागरण काल की संज्ञा दी है। सम्पूर्ण हिंदी साहित्य के श्रेष्ठ कवि और उत्तम रचनाएं इसी काल में प्राप्त होती हैं। दक्षिण में आलवार बंधु नाम से कई प्रख्यात भक्त हुए हैं। इनमें से कई तथाकथित नीची जातियों के भी थे। वे बहुत पढ़े-लिखे नहीं थे, परंतु अनुभवी थे। आलवारों के पश्चात् दक्षिण में आचार्यों की एक परंपरा चली जिसमें रामानुजाचार्य प्रमुख थे। रामानुजाचार्य की परंपरा में रामानंद हुए। उनका व्यक्तित्व असाधारण था। वे उस समय के सबसे बड़े आचार्य थे। उन्होंने भक्ति के क्षेत्र में ऊंच-नीच का भेद तोड़ दिया। सभी जातियों के अधिकारी व्यक्तियों को आपने शिष्य बनाया। उस समय का सूत्र हो गया:

"जाति-पांति पूछे नहीं कोई।
हरि को भजै सो हरि का होई॥"

रामानंद ने विष्णु के अवतार राम की उपासना पर बल दिया। रामानंद ने और उनकी शिष्य-मंडली ने दक्षिण की भक्तिगंगा का उत्तर में प्रवाह किया। समस्त उत्तर-भारत इस पुण्य-प्रवाह में बहने लगा। भारत भर में उस समय पहुंचे हुए संत और महात्मा भक्तों का आविर्भाव हुआ।

महाप्रभु वल्लभाचार्य ने पुष्टि-मार्ग की स्थापना की और विष्णु के कृष्णावतार की उपासना करने का प्रचार किया। उनके द्वारा जिस लीला-गान का उपदेश हुआ उसने देशभर को प्रभावित किया। अष्टछाप के सुप्रसिद्ध कवियों ने उनके उपदेशों को मधुर कविता में प्रतिबिंबित किया। इसके उपरांत माध्व तथा निंबार्क संप्रदायों का भी जन-समाज पर प्रभाव पड़ा है। साधना-क्षेत्र में दो अन्य संप्रदाय भी उस समय विद्यमान थे। नाथों के योग-मार्ग से प्रभावित संत संप्रदाय चला जिसमें प्रमुख व्यक्तित्व संत कबीरदास का है। मुसलमान कवियों का सूफीवाद हिंदुओं के विशिष्टाद्वैतवाद से बहुत भिन्न नहीं है। इस काल में मुसलमान कवियों द्वारा सूफीवाद से रंगी हुई उत्तम रचनाएँ भी लिखी गईं।

संक्षेप में भक्ति-युग की चार प्रमुख काव्य-धाराएं मिलती हैं :

निर्गुण भक्ति

ज्ञानाश्रयी शाखा—प्रमुख कवि – कबीर
प्रेमाश्रयी शाखा— प्रमुख कवि – जायसी

सगुण भक्ति

रामाश्रयी शाखा— प्रमुख कवि—तुलसीदास
कृष्णाश्रयी शाखा— प्रमुख कवि –सूरदास

13वीं सदी तक धर्म के क्षेत्र में बड़ी अस्तव्यस्तता आ गई थी। जनता में सिद्धों और योगियों आदि द्वारा प्रचलित अंधविश्वास फैल रहे थे, संपन्न वर्ग में भी रूढ़ियों और आडंबर की प्रधानता हो चली थी। मायावाद के प्रभाव से लोकविमुखता और निष्क्रियता के भाव समाज में पनपने लगे थे। ऐसे समय में भक्ति आंदोलन के रूप में ऐसा भारतव्यापी विशाल सांस्कृतिक आंदोलन उठा जिसने समाज में उत्कर्षविधायक सामाजिक और वैयक्तिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की।

भक्ति आंदोलन का आरंभ दक्षिण के आलवार संतों द्वारा 10वीं सदी के लगभग हुआ। वहाँ शंकराचार्य के अद्वैतमत और मायावाद के विरोध में चार वैष्णव संप्रदाय खड़े हुए। इन चारों संप्रदायों ने उत्तर भारत में विष्णु के अवतारों का प्रचार-प्रसार किया। इनमें से एक के प्रवर्तक रामानुजाचार्य थे, जिनकी शिष्यपरंपरा में आनेवाले रामानंद ने (पंद्रहवीं सदी) उत्तर भारत में रामभक्ति का प्रचार किया। रामानंद के राम ब्रह्म के स्थानापन्न थे जो राक्षसों का विनाश और अपनी लीला का विस्तार करने के लिए संसार में अवतीर्ण होते हैं। भक्ति के क्षेत्र में रामानंद ने ऊँच-नीच का भेदभाव मिटाने पर विशेष बल दिया। राम के सगुण और निर्गुण दो रूपों को माननेवाले दो भक्तों - कबीर और तुलसी को इन्होंने प्रभावित किया। विष्णुस्वामी के शुद्धाद्वैत मत का आधार लेकर इसी समय

बल्लभाचार्य ने अपना पुष्टिमार्ग चलाया। बारहवीं से सोलहवीं सदी तक पूरे देश में पुराणसम्मत कृष्णचरित् के आधार पर कई संप्रदाय प्रतिष्ठित हुए, जिनमें सबसे ज्यादा प्रभावशाली वल्लभ का पुष्टिमार्ग था। उन्होंने शांकर मत के विरुद्ध ब्रह्म के सगुण रूप को ही वास्तविक कहा। उनके मत से यह संसार मिथ्या या माया का प्रसार नहीं है बल्कि ब्रह्म का ही प्रसार है, अतः सत्य है। उन्होंने कृष्ण को ब्रह्म का अवतार माना और उसकी प्राप्ति के लिए भक्त का पूर्ण आत्मसमर्पण आवश्यक बतलाया। भगवान् के अनुग्रह या पुष्टि के द्वारा ही भक्ति सुलभ हो सकती है। इस संप्रदाय में उपासना के लिए गोपीजनवल्लभ, लीलापुरुषोत्तम कृष्ण का मधुर रूप स्वीकृत हुआ। इस प्रकार उत्तर भारत में विष्णु के राम और कृष्ण अवतारों प्रतिष्ठा हुई।

यद्यपि भक्ति का स्रोत दक्षिण से आया तथापि उत्तर भारत की नई परिस्थितियों में उसने एक नया रूप भी ग्रहण किया। मुसलमानों के इस देश में बस जाने पर एक ऐसे भक्तिमार्ग की आवश्यकता थी जो हिंदू और मुसलमान दोनों को ग्राह्य हो। इसके अतिरिक्त निम्न वर्ग के लिए भी अधिक मान्य मत वही हो सकता था जो उन्हीं के वर्ग के पुरुष द्वारा प्रवर्तित हो। महाराष्ट्र के संत नामदेव ने १४वीं शताब्दी में इसी प्रकार के भक्तिमत का सामान्य जनता में प्रचार किया जिसमें भगवान् के सगुण और निर्गुण दोनों रूप गृहीत थे। कबीर के संतमत के ये पूर्वपुरुष हैं। दूसरी ओर सूफी कवियों ने हिंदुओं की लोककथाओं का आधार लेकर ईश्वर के प्रेममय रूप का प्रचार किया। इस प्रकार इन विभिन्न मतों का आधार लेकर हिंदी में निर्गुण और सगुण के नाम से भक्तिकाव्य की दो शाखाएँ साथ साथ चलीं। निर्गुणमत के दो उपविभाग हुए - ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी। पहले के प्रतिनिधि कबीर और दूसरे के जायसी हैं। सगुणमत भी दो उपधाराओं में प्रवाहित हुआ - रामभक्ति और कृष्णभक्ति। पहले के प्रतिनिधि तुलसी हैं और दूसरे के सूरदास।

भक्तिकाव्य की इन विभिन्न प्रणालियों की अपनी अलग अलग विशेषताएँ हैं पर कुछ आधारभूत बातों का सन्निवेश सब में है। प्रेम की सामान्य भूमिका सभी ने स्वीकार की। भक्तिभाव के स्तर पर मनुष्यमात्र की समानता सबको मान्य है। प्रेम और करुणा से युक्त अवतार की कल्पना तो सगुण भक्तों का आधार ही है पर निर्गुणोपासक कबीर भी अने राम को प्रिय, पिता और स्वामी आदि के रूप में स्मरण करते हैं। ज्ञान की तुलना में सभी भक्तों ने भक्तिभाव को गौरव दिया है। सभी भक्त कवियों ने लोकभाषा का माध्यम स्वीकार किया है। ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रमुख कवि कबीर पर तात्कालिक विभिन्न धार्मिक प्रवृत्तियों और दार्शनिक मतों का सम्मिलित प्रभाव है। उनकी रचनाओं में धर्मसुधारक और समाजसुधारक का रूप विशेष प्रखर है। उन्होंने आचरण की शुद्धता पर बल दिया। बाह्याडंबर, रूढ़ियों और अंधविश्वासों पर उन्होंने तीव्र कशाघात किया। मनुष्य की क्षमता का उद्घोष कर उन्होंने निम्नश्रेणी की जनता में आत्मगौरव का भाव जगाया। इस शाखा के अन्य कवि रैदास, दादू हैं।

अपनी व्यक्तिगत धार्मिक अनुभूति और सामाजिक आलोचना द्वारा कबीर आदि संतों ने जनता को विचार के स्तर पर प्रभावित किया था। सूफी संतों ने अपने प्रेमाख्यानों द्वारा लोकमानस को भावना के स्तर पर प्रभावित करने का प्रयत्न किया। ज्ञानमार्गी संत कवियों की वाणी मुक्तकबद्ध है, प्रेममार्गी कवियों की प्रेमभावना लोकप्रचलित आख्यानों का आधार लेकर प्रबंधकाव्य के रूप में खपायित हुई है। सूफी ईश्वर को अनंत प्रेम और सौंदर्य का भंडार मानते हैं। उनके अनुसार ईश्वर को जीव प्रेम के मार्ग से ही उपलब्ध कर सकता है। साधाना के मार्ग में आनेवाली बाधाओं को वह गुरु या पीर की सहायता से साहसपूर्वक पार करके अपने परमप्रिय का साक्षात्कार करता है। सूफियों ने चाहे अपने मत के प्रचार के लिए अपने कथाकाव्य की रचना की हो पर साहित्यिक दृष्टि से उनका मूल्य इसलिए है कि उसमें प्रेम और उससे प्रेरित अन्य संवेगों की व्यंजना सहजबोध्य लौकिक भूमि पर हुई है। उनके द्वारा व्यंजित प्रेम ईश्वरोन्मुख है पर सामान्यतः यह प्रेम लौकिक भूमि पर ही संक्रमण करता है। परमप्रिय के सौंदर्य, प्रेमक्रीड़ा और प्रेमी के विरहोद्वेग आदि का वर्णन उन्होंने इतनी तन्मयता से किया है और उनके काव्य का मानवीय आधार इतना पुष्ट है कि आध्यात्मिक प्रतीकों और रूपकों के बावजूद उनकी रचनाएँ प्रेमसमर्पित कथाकाव्य की श्रेष्ठ कृतियाँ बन गई हैं। उनके काव्य का पूरा वातावरण लोकजीवन का और गार्हस्थिक है। प्रेमाख्यानकों की शैली फारसी के मसनवी काव्य जैसी है। इस धारा के सर्वप्रमुख कवि जायसी हैं जिनका "पदमावत" अपनी मार्मिक प्रेमव्यंजना, कथारस और सहज कलाविन्यास के कारण विशेष प्रशंसित हुआ है। इनकी अन्य रचनाओं में "अखरावट" और "आखिरी कलाम" आदि हैं, जिनमें सूफी संप्रदायसंगत बातें हैं। इस धारा के अन्य कवि हैं कुतबन, मंज़न, उसमान, शेख, नबी और नूरमुहम्मद आदि।

ज्ञानमार्गी शाखा के कवियों में विचार की प्रधानता है तो सूफियों की रचनाओं में प्रेम का एकांतिक रूप व्यक्त हुआ है। सगुण धारा के कवियों ने विचारात्मक शुष्कता और प्रेम की एकांगिता दूरकर जीवन के सहज उल्लासमय और व्यापक रूप की प्रतिष्ठा की। कृष्णभक्तिशाखा के कवियों ने आनंदस्वरूप लीलापुरुषोत्तम कृष्ण के मधुर रूप की प्रतिष्ठा कर जीवन के प्रति गहन राग को स्फूर्त किया। इन कवियों में सूरसागर के रचयिता महाकवि सूरदास श्रेष्ठतम हैं जिन्होंने कृष्ण के मधुर व्यक्तित्व का अनेक मार्मिक रूपों में साक्षात्कार किया। ये प्रेम और सौंदर्य के निसर्गसिद्ध गायक हैं। कृष्ण के बालरूप की जैसी विमोहक, सजीव और बहुविध कल्पना इन्होंने की है वह अपना सानी नहीं रखती। कृष्ण और गोपियों के स्वच्छंद प्रेमप्रसंगों द्वारा सूर ने मानवीय राग का बड़ा ही निश्छल और सहज रूप उद्घाटित किया है। यह प्रेम अपने सहज परिवेश में सहयोगी भाववृत्तियों से संपृक्त होकर विशेष अर्थवान् हो गया है। कृष्ण के प्रति उनका संबंध

मुख्यतः सख्यभाव का है। आराध्य के प्रति उनका सहज समर्पण भावना की गहरी से गहरी भूमिकाओं को स्पर्श करनेवाला है। सूरदास वल्लभाचार्य के शिष्य थे। वल्लभ के पुत्र बिठ्ठलनाथ ने कृष्णलीलागान के लिए अष्टछाप के नाम से आठ कवियों का निर्वाचन किया था। सूरदास इस मंडल के सर्वोत्कृष्ट कवि हैं। अन्य विशिष्ट कवि नंददास और परमानंददास हैं। नंददास की कलाचेतना अपेक्षाकृत विशेष मुखर है।

मध्ययुग में कृष्णभक्ति का व्यापक प्रचार हुआ और वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्ग के अतिरिक्त अन्य भी कई संप्रदाय स्थापित हुए, जिन्होंने कृष्णकाव्य को प्रभावित किया। हितहरिवंश (राधावल्लभी संप्र.), हरिदास (टट्टी संप्र.), गदाधर भट्ट और सूरदास मदनमोहन (गौड़ीय संप्र.) आदि अनेक कवियों ने विभिन्न मतों के अनुसार कृष्णप्रेम की मार्मिक कल्पनाएँ कीं। मीरा की भक्ति दांपत्यभाव की थी जो अपने स्वतःस्फूर्त कोमल और करुण प्रेमसंगीत से आंदोलित करती हैं। नरोत्तमदास, रसखान, सेनापति आदि इस धारा के अन्य अनेक प्रतिभाशाली कवि हुए जिन्होंने हिंदी काव्य को समृद्ध किया। यह सारा कृष्णकाव्य मुक्तक या कथाश्रित मुक्तक है। संगीतात्मकता इसका एक विशिष्ट गुण है।

कृष्णकाव्य ने भगवान् के मधुर रूप का उद्घाटन किया पर उसमें जीवन की अनेकरूपता नहीं थी, जीवन की विविधता और विस्तार की मार्मिक योजना रामकाव्य में हुई। कृष्णभक्तिकाव्य में जीवन के माधुर्य पक्ष का स्फूर्तिप्रद संगीत था, रामकाव्य में जीवन का नीतिपक्ष और समाजबोध अधिक मुखरित हुआ। एक ने स्वच्छंद रागतत्व को महत्व दिया तो दूसरे ने मर्यादित लोकचेतना पर विशेष बल दिया। एक ने भगवान की लोकरंजनकारी सौंदर्यप्रतिमा का संगठन किया तो दूसरे ने उसके शक्ति, शील और सौंदर्यमय लोकमंगलकारी रूप को प्रकाशित किया। रामकाव्य का सर्वोत्कृष्ट वैभव "रामचरितमानस" के रचयिता तुलसीदास के काव्य में प्रकट हुआ जो विद्याविद् ग्रियर्सन की दृष्टि में बुद्धदेव के बाद के सबसे बड़े जननायक थे। पर काव्य की दृष्टि से तुलसी का महत्व भगवान् के एक ऐसे रूप की परिकल्पना में है जो मानवीय सामर्थ्य और औदात्य की उच्चतम भूमि पर अधिष्ठित है। तुलसी के काव्य की एक बड़ी विशेषता उनकी बहुमुखी समन्वयभावना है जो धर्म, समाज और साहित्य सभी क्षेत्रों में सक्रिय है। उनका काव्य लोकोन्मुख है। उसमें जीवन की विस्तीर्णता के साथ गहराई भी है। उनका महाकाव्य रामचरितमानस राम के संपूर्ण जीवन के माध्यम से व्यक्ति और लोकजीवन के विभिन्न पक्षों का उद्घाटन करता है। उसमें भगवान् राम के लोकमंगलकारी रूप की प्रतिष्ठा है। उनका साहित्य सामाजिक और वैयक्तिक कर्तव्य के उच्च आदर्शों में आस्था दृढ़ करनेवाला है। तुलसी की "विनयपत्रिका" में आराध्य के प्रति, जो कवि के आदर्शों का सजीव प्रतिरूप है, उनका निरंतर और निश्छल समर्पणभाव, काव्यात्मक आत्माभिव्यक्ति का उत्कृष्ट दृष्टांत है। काव्याभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों पर उनका समान अधिकार है। अपने

समय में प्रचलित सभी काव्यशैलियों का उन्होंने सफल प्रयोग किया। प्रबंध और मुक्तक की साहित्यिक शैलियों के अतिरिक्त लोकप्रचलित अवधी और ब्रजभाषा दोनों के व्यवहार में वे समान रूप से समर्थ हैं। तुलसी के अतिरिक्त रामकाव्य के अन्य रचयिताओं में अग्रदास, नाभादास, प्राणचंद चौहान और हृदयराम आदि उल्लेख्य हैं।

आज की दृष्टि से इस संपूर्ण भक्तिकाव्य का महत्व उसक धार्मिकता से अधिक लोकजीवनगत मानवीय अनुभूतियों और भावों के कारण है। इसी विचार से भक्तिकाल को हिंदी काव्य का स्वर्ण युग कहा जा सकता है।

भक्ति काव्य के प्रमुख सम्प्रदाय और उनका वैचारिक आधार

भक्ति का भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचार-प्रसार करने में वैष्णव आचार्यों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वैष्णव भक्ति को स्थापित करने वाले आचार्य 11वीं से 16वीं शती तक की समयावधि के हैं। वैष्णव भक्ति के प्रमुख संप्रदाय और आचार्य निम्नलिखित हैं

रामावत सम्प्रदाय:-

- रामावत सम्प्रदाय का प्रवर्तन रामानन्द ने किया। रामानन्द का जन्म 'श्री भक्त सटीक' के अनुसार 1368 ई. में प्रयाग में कान्यकुब्ज ब्राह्मण हुआ। रामानन्द अपने गुरु में के सर्वाधिक यशस्वी साधक व प्रगतिशील विचारक थे। भक्तमाल के अनुसार सन्त मत के प्रचार-प्रसार का श्रेय इन्हीं को जाता है। इनके गुरु राघवानन्द थे। भक्तमाल के अनुसार रामानन्द के 12 शिष्य थे जिनका वर्णन इस प्रकार है- अनन्तानन्द, सुखानन्द, सुरसुरानन्द, भावानन्द, नरहर्यानन्द, पीपा, कबीर, धन्ना, रैदास, पद्मावती, सेना व सुरसुरी ।
- उन्होंने मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा, वेदों का अध्ययन एवं उपासना के बाह्य साधनों की आलोचना की तथा अन्तः साधना को महत्व दिया। उनकी रचनाओं में ब्रह्म की प्रेमाभक्ति का उपदेश है। स्वामी रामानन्द के विरक्त दल का संगठन 'वैरागी' नाम से किया गया था।
- रामानन्द के गुरु राघवानन्द जी ने 'सिद्धान्त पंचमात्रा' नामक ग्रन्थ की रचना की। रामानन्द दशधा भक्ति के प्रचारक थे। दशधा भक्ति के प्रचार के साथ-ही-साथ उन्होंने ज्ञानवृत्ति प्रेमियों को भी ज्ञानमार्ग का उपदेश दिया।

- रामानन्द से ही प्रेरणा लेकर कबीर ने साधना एवं भक्ति को सभी वर्णों तथा सभी वर्गों के लिए सुलभ कर दिया था। रामानन्द की रचनाओं से उनका प्रगतिशील, आध्यात्मिक एवं साधनात्मक दृष्टिकोण प्राप्त होता है।

श्री सम्प्रदाय:-

- श्री सम्प्रदाय का प्रवर्तन श्री रामानुजाचार्य ने किया। इनसे गोस्वामी तुलसीदास सर्वाधिक प्रभावित थे।
- रामानुजाचार्य ने विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त की स्थापना की। इन्होंने अवतारी राम को अपनी विष्णुभक्ति का उपास्य देव स्वीकार किया। इनका मत था कि पुरुषोत्तम ब्रह्म सगुण और सविशेष है।
- वै भक्ति को ही मुक्ति का साधन स्वीकार करते हैं। इनका कहना व्यक्ति को 'दास्यभाव से प्रभु की सेवा करनी चाहिए। ये जीव को दास और परमात्मा को स्वामी मानते हैं।
- तत्त्वमसि का अर्थ 'वह तू है' न लगाकर रामानुजाचार्य जी कहते हैं . इसका तात्पर्य है कि 'तू उसका सेवक है।'

ब्रह्म सम्प्रदाय:-

- मध्वाचार्य का सम्प्रदाय ब्रह्म सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है। इनका जन्म दक्षिण भारत के बेलिग्राम नामक स्थान पर हुआ। ये अद्वैतवाद के घोर विरोधी थे। इन्होंने द्वैतवाद की स्थापना की। इनके मत में भगवान विष्णु आठ गुणों से युक्त व सर्वोच्च तत्त्व है।
- जगत सत्य है, ईश्वर और जीव का भेद, जीव का जीव से भेद, जड़ का जीव से भेद वास्तविक है। इनके अनुसार मुक्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन 'अमला भक्ति' है। वेद का समस्त तात्पर्य विष्णु ही है।

रुद्र सम्प्रदाय:-

- रुद्र सम्प्रदाय का प्रवर्तन श्री विष्णु स्वामी ने किया।
- डॉ. भण्डारकर के अनुसार, इनका जन्म 13वीं शताब्दी में हुआ। इनके मतानुसार ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप है। माया ईश्वर के अधीन ही रहती है। इनकी मान्यता है कि ईश्वर का प्रधान अवतार 'नृसिंह' है। दार्शनिक दृष्टि से इनका दर्शन शुद्धाद्वैत कहलाता है। इनके प्रमुख शिष्य वल्लभाचार्य थे।

रसिक संप्रदाय:-

- निम्बार्काचार्य का सम्प्रदाय रसिक या सनकादि है। इसमें राधा-कृष्ण की युगल उपासना का विधान है। ये भक्ति को ही मुक्ति का साधन मानते हैं। तथा विष्णु के अवतार रूप कृष्ण इनके उपास्य हैं।
- डॉ. भण्डारकर के अनुसार, इनका समय 1162 ई. के आस-पास मान गया है। इनका दार्शनिक सिद्धान्त भेदाभेदवाद या द्वैताद्वैतवाद कहलाता है। जीव अवस्था भेद से ब्रह्म के साथ भिन्न भी है तथा अभिन्न भी है। जीव ब्रह्म का अंश है, ब्रह्म अंशी है, जीव अणु अल्पज्ञ है।

सखी संप्रदाय:-

- स्वामी हरिदास का सखी सम्प्रदाय इसी की शाखा है। निम्बार्काचार्य के चार शिष्य थे, जो इस प्रकार हैं- श्रीनिवासाचार्य, औदुम्बराचार्य, गौरमुखाचार्य और लक्ष्मण भट्ट । निम्बार्क सम्प्रदाय में निम्बार्काचार्य को सुदर्शन चक्र का अवतार माना जाता है।
- निम्बार्काचार्य द्वारा रचित प्रमुख ग्रन्थ निम्न हैं

- (i) वेदान्त पारिजात सौरभ
- (ii) दशश्लोकी
- (iii) कृष्ण स्तवराज
- (iv) मन्त्र रहस्य षोडशी
- (v) प्रपन्न कल्पवल्ली

वल्लभ संप्रदाय:-

- श्री वल्लभाचार्य ने वल्लभ सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया। इनका जन्म रायपु जिले के चम्पारण नामक स्थान पर हुआ था। इनका समस्त जीवन उता भारत में बीता। ये तेजस्वी महात्मा थे। दार्शनिक दृष्टि से इस सम्प्रदाय का सिद्धांत वल्लभ सम्प्रदाय कहलाता है।
- मायाब्रह्म से सर्वथा अलिप्त है। ब्रह्म अपनी सन्धिनी शक्ति से सत् का संवित शक्ति से चित् व अहलादिनी शक्ति से आनन्द का आविर्भाव करता है। जीव सत्य व नित्य है, उसकी उत्पत्ति नहीं होती। जीव अणु है। जीव तीन प्रकार के हैं-शुद्ध जीव, संसारी जीव और मुक्त जीव।
- जड़ जगत न तो उत्पन्न होता है न ही न ही नष्ट ,बल्कि इनका आविर्भाव व तिरोभाव होता है। भगवत् प्राप्ति का साधन भक्ति है।इसलिए यह मार्ग पुष्टिमार्ग कहलाता है। पुष्टिभक्ति को मानने वाले भक्त को पुष्टिमार्गी कहते हैं। वल्लभ

सम्प्रदाय के प्रचार-प्रसार में वल्लभाचार्य के पुत्र गोस्वामी विठ्ठलनाथ का योगदान उल्लेखनीय है।

- विठ्ठलदास जी ने ब्रजमण्डल में वैष्णव धर्म की रक्षा के लिए अष्टछाप की स्थापना की।
- वल्लभाचार्य द्वारा लिख गए प्रमुख ग्रन्थ निम्न हैं

- (i) पूर्वमीमांसा भाष्य
- (ii) अणुभाष्य
- (iii) श्रीमद्भागवत के दशम् स्कन्ध पर सुबोधनी टीका
- (iv) तत्त्वदीप निबन्ध
- (v) श्रृंगार रस मण्डन
- (vi) पंचश्लोकी

सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय ,अल्मोड़ा,उत्तराखण्ड

प्राचीन एवं भक्तिकालीन काव्य

बी०ए०प्रथम वर्ष

प्रथम सेमेस्टर

पेपर प्रथम
Unit V



विषय लेखक

डॉ० वंशीधर उपाध्याय और पंकज पुंडीर असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी), राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुनस्यारी, पिथौरागढ़, उत्तराखंड



सूफी काव्यधारा एवं मालिक मुहम्मद जायसी

व्युत्पत्ति:-सूफी नाम के स्रोत को लेकर अनेक मत हैं। कुछ लोग इसे यूनानी सोफ़स (sophos, ज्ञान) से निकला मानते हैं। इस मूल से फिलोसफी, थियोसफी इत्यादि शब्द निकले हैं। कई इसको अरबी सफ़ः (पवित्र) से निकला मानते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि ये सूफ़ (ऊन) से आया है क्योंकि कई सूफी दरवेश ऊन का चोंगा पहनते थे। सूफी का मूल अर्थ "एक जो ऊन (ṣūf) पहनता है" है, और इस्लाम का विश्वकोश अन्य व्युत्पन्न परिकल्पनाओं को "अस्थिर" कहता है। ऊनी कपड़े पारंपरिक रूप से तपस्वियों और मनीषियों से जुड़े थे। एक अन्य स्पष्टीकरण में इस शब्द को उफान से लिया गया है, जिसका अरबी में अर्थ है "पवित्रता", और इस संदर्भ में तसव्वुफ का एक और समान विचार जैसा कि इस्लाम में माना जाता है तज़किह (जिसका अर्थ है: आत्म-शुद्धि), जो है व्यापक रूप से सूफीवाद में व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाता है। इन दोनों स्पष्टीकरणों को सूफी अल-रुदाबारी द्वारा संयुक्त किया गया था, जिन्होंने कहा, "सूफी वह है जो पवित्रता के साथ ऊपर ऊन पहनता है।

सूफी काव्यधारा के प्रेमाख्यानक काव्य एवं रचनाकार:- आचार्य शुक्ल ने 1501 ईसवी में कुतबन रचित 'मृगावती' को इस धारा का पहला हिंदी काव्य माना है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सन् 1500 ई. में ईश्वर दास द्वारा रचित 'सत्यवती' कथा को पहला हिंदी काव्य माना है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने चंदायन (1379 ई.) के रचित रचयिता मुल्ला दाऊद को हिंदी का प्रथम प्रेमाख्यान कवि माना है। कहीं-कहीं 'हंसावली' के रचयिता असाइत को प्रथम प्रेमाख्यान कवि माना गया है। 1370 ईसवी में 'हंसावली' को हिंदी का प्रथम प्रेम काव्य मानते हैं।

प्रमुख काव्य

हंसावली:- यह हिंदी का प्रथम प्रेमाख्यान काव्य है। इसकी रचना 1370 ई. मानी जाती है। इसके रचनाकार 'असाइत' हैं। डॉ. मोतीलाल मेनारिया इसे राजस्थानी भाषा का काव्य मानते हैं। कवि असाइत ने इस काव्य की प्रेरणा 'विक्रम और बेताल'

कथा से ली है। इसमें साहस और शैर्य से युक्त प्रेम का चित्रण है। इसमें पाटण की राजकुमारी हंसावली की कथा का वर्णन है। यह चौपाई छंद में लिखा गया है। इसमें शक्ति, शंभू और सरस्वती की वंदना है। इसका नायक योगी वेश धारक है। जो पाषाण हृदया राजकुमारी को अपनी ओर आकर्षित करता है।

चंदायन:- चांदायन का रचना काल 1379 ई है इसके रचनाकार मुल्ला दाउद है। इसका नायक लोर या लोरिक एवं नायिका चंदा है। नायक योगी बनकर निकलना, नाग द्वारा नायिका को डसा जाना आदि का वर्णन है। इसकी भाषा अवधी और शैली सरस तथा भावानुकूल है।

पद्मावत:-मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत का रचनाकाल 1540 ई है। पद्मावत प्रौढ़तम काव्य है। इसकी विषयवस्तु चित्तौड़ के राजा रतन सेन और सिंहल द्वीप की राजकुमारी पद्मावती के प्रेम विवाह और विवाहेतर जीवन का मार्मिक चित्रण है।

सूफी काव्य की प्रमुख विशेषताएं

1. लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की व्यंजना-

सूफी काव्यों में सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता यह मिलती है कि इनमें लौकिक प्रेम कही गयी है। सभी लौकिक प्रेम कहानियाँ अलौकिक प्रेम की अभिव्यंजना करती हैं। प्रबन्ध काव्यों की शैली को अपनाकर प्रेम कहानियों को विस्तार भी दिया गया है और प्रेम के संयोग और वियोग दोनों पक्षों को अभिव्यक्ति प्रदान की गयी है। सूफी काव्यों में वर्णित प्रेम क्रमशः लौकिक से अलौकिक की ओर बढ़ता हुआ शारीरिक भूमिका को पार करता हुआ प्रेम के आध्यात्मिक शिखरों को छूता दिखाई देता है। प्रेम के मधुर स्वरूप और उसके मार्ग में पड़ने वाली बाधाओं के साथ-साथ विरह की तीव्रता सर्वत्र चित्रित हुई है।

2. प्रबन्ध-कल्पना-

सूफी काव्यों की दूसरी प्रवृत्ति प्रबन्ध कल्पना से सम्बंधित है। सूफियों ने प्रबन्ध काव्य लिखे हैं। इन काव्यों के कथानक पूरी तरह संगठित, सुसम्बद्ध, व्यवस्थित, रोचक और आकर्षक घटनाओं से युक्त हैं। इन प्रबन्ध काव्यों में जिन प्रेमी-प्रेमिकाओं का वर्णन हुआ है, वे अपने व्यवहार, कर्म दोनों ही दृष्टियों से

सदाचारी दिखाये गये हैं। प्रबन्ध काव्यों में वर्णित लगभग सभी कहानियाँ एक जैसी हैं। सभी में प्रेम का कारण स्वप्न-दर्शन, चित्र-दर्शन, गुण-श्रवण या प्रत्यक्ष दर्शन ही रहा है। सभी प्रबन्ध काव्यों के नायक अपनी प्रिया को प्राप्त करने के लिए गृह-त्याग करके चल पड़े हैं और अंततः अपनी प्रियाओं को प्राप्त करने में सफल हुए हैं। इन प्रबन्ध काव्यों में वर्णनात्मकता पर्याप्त मात्रा में है।

प्रायः सभी प्रेमाख्यानों में प्रकृति-वर्णन, सरोवर-वर्णन, महल-वर्णन, रूप-सौन्दर्यवर्णन आदि पर्याप्त मात्रा में देखने को मिलते हैं। सभी सूफी कवियों ने अपने प्रबन्धों का विधान इस रूप में किया है कि वे भाव, कल्पना, वर्णन और रहस्यात्मक अनुभूतियों के मिले-जुले रूप प्रतीत होते हैं।

3. चरित्रांकन-

सूफी काव्यों में जो नायक नायिका व अन्य पाव चित्रित हुए हैं, वे प्रेमी अधिक हैं। कवियों ने नायक-नायिकाओं के सम्पूर्ण जीवन का चित्र प्रस्तुत न करके उनके प्रेम प्रधान पक्ष को ही अधिक महत्व दिया है। प्रेम के विविधप्रसंग और व्यापार इन सभी सूफीकाव्यों में देखने को मिलते हैं। डॉ. शिवकुमार शर्मा का यह कथन समीचीन प्रतीत होता है कि “सूफी कवियों की नायिकाएं हासोन्मुख संस्कृत साहित्य की नायिकाओं के समान एक हीसांचे में ढली हुई हैं। उनमें जीवन के विविधघात-प्रतिघातों का अभाव है। नायक का स्वरूप भी प्रायः पूर्व निश्चित-सा प्रतीत होता है।”

4. लोक पक्ष का चित्रण-

सूफी प्रेमाख्यानों में जीवन के लोकपक्ष एवं हिन्दू-संस्कृति का वर्णन गहराई से किया गया है। सर्वसाधारण के अंधविश्वास, मनौतियाँ, जादू-टोना, लोकोत्सव, लोकव्यवहार, तीर्थ, व्रत, सांस्कृतिक वातावरण और हिन्दू जीवन के विविध पक्षों का चित्रण सभी काव्यों में सफलतापूर्वक किया गया है। हिन्दू प्रेम कहानियों को लेकर सूफी कवियों ने जो काव्य रचे हैं, उनमें न केवल हिन्दू घरों या परिवारों के रहन-सहन, आचार-विचार व व्यवहार का साँगोपाँग चित्रण देखने को मिलता है, बल्कि हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों, विश्वासों और मान्यताओं का वर्णन भी पूरी कुशलता से किया गया दिखाई देता है।

5. नारी प्रेम साधना की साध्य-

सूफी काव्यों को यदि ध्यान से देखें तो स्पष्ट होता है कि इन सभी काव्यों की आलम्बन नारी बनी हुई है। नारी को इन कवियों ने सामान्य नारी न मानकर ईश्वरीय शक्ति का प्रतिरूप माना है और इसी कारण इसे आलम्बन बनाकर काव्य-सृजन किया है। परमात्माका प्रतीक बनी हुई येनारिय भावनाकालक्ष्य प्रतीत होती हैं। स्पष्ट शब्दों में कह सकते हैं कि जैसे कोई साधक ईश्वर प्राप्ति के लिए साधना करता है, उसी प्रकार सूफी काव्यों के नायक साधक बनकर परमात्मा की प्रतीक बनी हुई नारियों को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नरत दिखलाये गये हैं। श्री परशुराम चतुर्वेदी ने इस सम्बन्ध में उचित टिप्पणी की है कि “सूफी कवियों ने नारी को यहाँ अपनी प्रेम-साधना के साध्य रूप में स्वीकार किया है। इसके कारण वह इनके यहाँ किसी प्रेमी के लौकिक जीवन की भोग्य वस्तुमात्र नहीं रह गयी है।” स्पष्ट शब्दों में नारी भोग्या न होकर एक शक्ति के रूप में चित्रित हुई है।

6. रस वर्णन-

सूफी काव्यों में शृंगार रस को प्रमुखता मिली है। संयोग और वियोग के सरस मार्मिक चित्र सभी सूफी काव्यों में देखने को मिलते हैं। इन कवियों द्वारा किये गये विरह वर्णन में रसात्मकता, अनुभूतिपरकता, सूक्ष्मता और ऐसी प्रभावी शक्ति निहित है कि पाठक ऐसे अंशों को पढ़ते समय उसी में निमग्न हो जाता है। कहीं-कहीं अश्लीलता भी आगयी है, किन्तु यह अश्लीलता ऐसी नहीं है जिसे पढ़कर हम नाक-भों सिकोडने लगे। इस अश्लीलता ने रसाभाव को भी काव्य में नहीं आने दिया है। शृंगार रस के अतिरिक्त अधिक महत्त्व करुण और शान्त को मिला है, किन्तु अन्य रस जैसे वीर, वीभत्स आदि भी यत्र-तत्र देखने को मिल जाते हैं।

7 मण्डनात्मकता-

सूफी काव्यों की एक उल्लेखनीय विशेषता मण्डनात्मकता की प्रवृत्ति है। सभी सूफी कवियों ने हिन्दू मुस्लिम जातियों में धार्मिक एकता का श्रीगणेश किया था और खंडनात्मक पक्ष को छोड़कर लोकहितकारी और मण्डनात्मक पक्ष को ग्रहण किया था। यही कारण है कि सूफी काव्यों में खंडन नहीं है, निर्गुण कवियों की भांति वहाँ विरोध का भाव कहीं नहीं है। वहाँ तो लोक-हितकारक स्थितियाँ ही चित्रित हुई हैं। आचार्य शुक्ल का यह कथन उचित ही है कि ‘प्रेमस्वरूप ईश्वर को सामने रखकर सूफी कवियों ने हिन्दू और मुसलमानों को मनुष्य के समान रूप में दिखलाया है तथा प्रेमभाव को महत्त्व देकर भेद-बुद्धि को हटाने का सफल प्रयास किया है।’

8 भाषा-शैली और अलंकार-

सूफ़ीकाव्य के सभी रचयिताओं ने प्रायः अवधी भाषा को अपनाया है। यह बात अलग है कि कहीं-कहीं अन्य क्षेत्रीय बोलियों के शब्द भी इन काव्यों में देखने को मिलते हैं। बीच-बीच में मुहावरों के प्रयोग से भाषा प्रौढ़ और अभिव्यक्ति अधिक सक्षम रूपलेकर सामने आयी है। प्रमुख रूप से दोहा और चौपाई को अपनाया गया है। अलंकारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा का प्रयोग बहुतायत से मिलता है, किन्तु अन्योक्ति, समासोक्ति, अतिशयोक्ति, रूपकातिशयोक्ति तथा सदेह और भ्रम जैसे अलंकार भी आवश्यकतानुसार प्रयुक्त किए गये हैं।

निष्कर्ष:-

संक्षेप में कह सकते हैं कि सूफ़ी काव्य भक्तिकाल का एक ऐसा काव्य है जिसमें प्रेम को महत्व देकर उसके उदात्त व अलौकिक पक्ष को उद्घाटित करते हुए सांस्कृतिक वैभव को भी अभिव्यक्ति प्रदान की गयी है।

जीवन-परिचय- हिन्दी के भक्ति साहित्य में प्रेमाश्रयी निर्गुण भक्ति शाखा के प्रवर्तक प्रसिद्ध सूफ़ी सन्त और प्रेमकाव्य के सफल कवि मलिक मुहम्मद जायसी का जन्म सन् 1492 ई० के लगभग जायस नामक स्थान पर हुआ था। 'आखिरी कलाम' नामक ग्रन्थ में इन्होंने अपने जन्मकाल तथा जन्म-स्थान का स्वयं संकेत किया है- "भा अवतार मोर नौ सदी। तीस बरम ऊपर कवि बदी।" तथा "जायस नगर मोर स्थानू" कुछ विद्वान जायसी का जन्म स्थान "गाजीपुर" मानते हैं किन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। इनके पिता का नाम शेख ममरेज था किन्तु माता का नाम अज्ञात है। जब जायसी बालक ही थे कि इनके माता-पिता का देहावसान हो गया। तत्पश्चात् इनका पालन-पोषण साधु-सन्तों में ही हुआ। सूफ़ी सम्प्रदाय के प्रसिद्ध पीर शेख मोहदी इनके गुरु थे। जायसी की शिक्षा के विषय में कुछ पता नहीं चलता परन्तु इतना निश्चित है कि जायसी को वेदान्त, ज्योतिष, दर्शन, रसायन और हठयोग का पर्याप्त ज्ञान था।

जायसी देखने में कुरूप थे। उनके मुख पर चेचक के दाग थे। चेचक के प्रकोप से उनकी बायी आँख और कान क्षीण हो गये इनकी वाणी में विचित्र शक्ति थी। कहा जाता है कि एक बार बादशाह शेरशाह। जायसी के कुरूप को देखकर हँस पड़े थे तब इन्होंने कहा था- "मोहिं का हँससि कै कोहरहि" अर्थात् तुम मुझ पर हँसे हो अथवा उस कुम्हार (विधाता) पर जिसने मुझे बनाया है! इस पर शेरशाह बड़ा लज्जित हुआ था। मलिक मुहम्मद जायसी गाजीपुर और भोजपुर के राजदरबार में रहते थे किन्तु

वे बाद में अमेठी के राजा भानसिंह के दरबाह में चले गये थे। कहते हैं कि इनकी मृत्यु किसी शिकारी की गोली से सन 1542 ई० हुई थी।

साहित्यिक कृतियाँ-

जायसी की कई रचनाएँ बतायी जाती हैं, जिनमें से निम्नलिखित कृतियाँ उपलब्ध हैं-

1. पद्मावत- यह जायसी की सर्वोत्कृष्ट रचना तथा हिंदी का श्रेष्ठ महाकाव्य है। इसमें चित्तौड़ के राजा रत्नसेन और पद्मावती के प्रेम की कहानी है।

2. अखरावट - इसमें ईश्वर, जीव, सृष्टि आदि से सम्बन्धित

सिद्धान्त वर्णित हैं।

3. आखिरी कलाम - इस ग्रन्थ में कयामत (महाप्रलय) का वर्णन है।

4. चित्ररेखा - यह प्रेमकाव्य है। इसमें कन्नौज के राजकुमार प्रीतम सिंह तथा चन्द्रपुर नरेश चन्द्रभानु की राजकुमारी चित्ररेखा की प्रेमकथा वर्णित है।

जायसी की काव्यगत विशेषताएं

प्रेम के उपासक कविवर जायसी हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि थे। हिन्दी काव्य को समृद्ध बनाने वालों में उनका नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। इनके काव्य में मुख्यतः निम्नलिखित विशेषताएँ पायी जाती हैं-

1. **बिरह - वर्णन** - कविवर जायसी ने श्रृंगार के संयोग और वियोग, दोनों पक्षों का बहुत सुन्दर तथा स्वाभाविक चित्रण किया है तथापि संयोग की अपेक्षा वियोग वर्णन में उन्हें अधिक सफलता मिली है। नागमती का वियोग वर्णन हिन्दी साहित्य में बेजोड़ है। रत्नसेन का उभयपक्षी वियोग भी अत्यन्त मनोहर चित्रित हुआ है। प्रेम

की जो अभिव्यंजना नागमती के विरह वर्णन में हुई, वह अन्यत्र दुर्लभ है। नागमती के विरह में ताप की लपटों का प्रभाव देखिए-

"जेहि पंखी के नियरे होइ, कहें विरह की बात ।
सोइ पंखी जाई जरि, तरुवर होइ निपात ॥"

नागमती की विरह की अग्नि केवल नागमती तक ही सीमित नहीं है, उसमें जड़-चेतन सम्पूर्ण संसार झुलस रहा है-

"नैनन चली रक्त कै धारा ।कथा भीजि भयउ रतनारा ॥
सूरज बूड़ि गया हुई ताता। ओ मजीठ टेसू बन राता ॥
औ बसन्त राता वनस्पति । ओ राते सब जोगी जती ॥"

विरह की यह अवस्था व्यक्ति से उठकर प्रकृति से साम्य कर लेती है। नागमती का प्रेम शुद्ध तत्व पर आधारित है। उसमें वासना का लेश भी नहीं है। नागमती के विरह वर्णन के अन्तर्गत ही वह प्रसिद्ध बारहमासा है जिसमें विरह वेदना का निर्मल स्वरूप, हिन्दू दाम्पत्य-जीवन की मर्मस्पर्शी मधुरता, चारों ओर फैली हुई प्राकृतिक वस्तुओं तथा व्यापारों से भारतीय हृदय का साहचर्य तथा सरस, मधुर, प्रवाहमयी स्वाभाविक भाषा - सब कुछ एक साथ देखने को मिलते हैं। जायसी का यह बारहमासा हिन्दी साहित्य में प्रकृति का उद्दीपन विभाव के रूप में अद्भुत चित्रण है। उनके विरह वर्णन में कल्पना की बहुत ऊँची उड़ान है। नागमती अपने पति से मिलना चाहती है। कवि की ऊँची कल्पना देखिए-

"यह तन जारों छार करि, कहौ कि पवन उड़ाव ।
मकु तेहि मारग उड़ि परै, "कन्त धरै जँह पाँव ॥"

यह ठीक है कि जायसी ने विरह वर्णन में अत्युक्तियों का सहारा लिया है किन्तु उनकी अत्युक्तियों में भी गम्भीरता और स्वाभाविकता है।

2. आध्यात्मिक भावना- पद्मावती और रत्नसेन की इस प्रेम कहानी को जायसी ने सूफियों की परमार्थिक साधना का रूप दिया है। इस प्रेमकाव्य में लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम की अभिव्यक्ति की गयी है। कहीं-कहीं तो प्रेम वर्णन में

इतनी गम्भीरता और व्यापकता आ गयी है मानो कवि अलौकिक प्रेम का ही वर्णन कर रहा हो। रत्नसेन की पद्मावती तक पहुँचने की प्रेम साधना आत्मा के ईश्वर तक पहुँचने का प्रेममार्ग है। सुआ (तोता) गुरु का प्रतीक है जो उचित प्रेममार्ग दिखाता है। नागमती संसार का बंधन जाल है। जो रत्नसेन रूपी साधक के प्रेममार्ग में बाधक है। पद्मावती बुद्धि अथवा स्वयं परमात्मा का प्रतीक है। राघव चेतन शैतान तथा अलाउददीन माया का रूप है जो साधक रत्नसेन के प्रियतमा रूप परमात्मा से मिलने में बाधक होता है। जायसी ने यह भी दावा किया है कि पद्मावत के अर्थ बड़े-बड़े पंडितों की बुद्धि से परे हैं-

"में एहि अरथ पंडितन्ह बूझा। कहा कि हम्ह कछु और न सूझा ॥ "

इस काव्य में कवि ने भारतीय हिन्दू धराने की कथा के माध्यम से सूफी सिद्धान्तों की रूपरेखा प्रस्तुत की है।

3. रहस्यवाद - कविवर जायसी ने अपने 'पद्मावत' काव्य में लौकिक प्रेम के द्वारा अलौकिक प्रेम का चित्रण किया है। 'पद्मावत' में अनेक ऐसे स्थल हैं जहाँ लौकिक पक्ष से अलौकिक की ओर संकेत किया गया है।

'पद्मावत' का प्रेम खण्ड उत्तम कोटि की रहस्यवादी रचना है। 'नख-शिख-वर्णन' और अन्य कुछ वर्णनों में भी रहस्यवाद की झलक मिलती है। पद्मावती सौंदर्य में जायसी ने परमात्मा की ओर संकेत किया है।

नमन जो देखा कंवल भा, निर्मल नीर सरीर ।
हँसते जो देखा हंस भा, दसन ज्योतिनग - हीर ॥"

तोते के मुख से पद्मावती का नख-शिख वर्णन सुनकर राजा रत्नसेन मूर्च्छित हो जाता है। मूर्च्छित अवस्था में उसे उस परम ज्योति से मिलन की अनुभूति होती है। मूर्च्छा भंग होने पर वह रोने लगता है-

"आवत जग बालक जस रोवा । उठा रोड़ हा ज्ञान सो खोवा ।
हौ तो अहाँ अमरपुर जहाँ। इहाँ मरन पुर आएहूँ कहाँ ॥"

प्रकृति के बीच रहस्यमय सत्ता का आभास भी जायसी ने बड़ी मार्मिकता के साथ किया है-

"रवि ससि नखत दिपत ओहि जोति । रतन पदारथ मानिक मोती ।
जहँ जहँ विहँसि सुभावहि हँसी तहँ तहँ छिटकि जोति परगसी ॥"

परमात्मा के अनन्त सौन्दर्य की झलक सृष्टि के सभी पदार्थों में पायी जाती है। परम ब्रह्म की भक्ति का परिचय देते हुए कवि कहता है-

"उन वानन अस को जो न मारा। वेधि रहा सगरौ संसारा ॥"

जायसी पर हठयोग का भी प्रभाव था। अतः उन्होंने साधनात्मक रहस्यवाद भी अपनाया है-

"नौ पौरि पर दसम दुआरा तेहि पर बजे राज घरियारा ।
नव पर नीर खीर दुई नदी । पानी भरहिं जैसे दुरपदी "

जायसी के पदमावत में रहस्यवाद के अनेक मार्मिक स्थल हैं। पं० रामचन्द्र शुक्ल तो जायसी के काव्य में ही सच्चा रहस्यवाद समझते हैं- "हिन्दी के कवियों में यदि कहीं रमणीय और सुन्दर रहस्यवाद है तो जायसी में, जिनकी कविता बहुत उच्च कोटि की है।"

4. आंतरिक भाव वर्णन - मलिक मुहम्मद जायसी ने आन्तरिक एवं बाह्य वर्णन चित्रण में अद्वितीय सफलता प्राप्त की है। नागमती के हृदय के आन्तरिक भाव-अभिलाषा, उत्कण्ठा विरह, सहानुभूति एवं विवशता आदि का चित्रण सजीव ढंग से किया है, प्रिय मिलन की अभिलाषा में अपने को मिटाकर राख कर देने के भाव में प्रेम की पराकाण्ठा है-

"यह तन जारों मसि करों, कहीं कि पवन उड़ाया।
मकु तेहि मारग उड़ि परै, कन्त धरै जहँ पाय ॥"

पति के परदेश में होने पर नागमती समस्त सुख को भूल गयी।

“जिन घर कन्ता ते सुखी, जिन गारौ - औगर्व ।
कन्त पियारा बाहिरै, हम सुख भूला सर्व ॥ ”

5. भाषा-शैली- जायसी ने अवधी भाषा में काव्य रचना की है। इनकी भाषा में अरबी, फारसी के शब्दों की अधिकता है। शब्दों में तोड़-मरोड़ भी पर्याप्त मात्रा में की गयी है। जायसी ने दोहा - चौपाई शैली में अपने 'पद्मावत' काव्य की रचना की है जिसे आगे चलकर तुलसी जैसे महान कवि ने भी अपने 'रामचरितमानस' के लिए उपयुक्त समझा। कवि अवधी भाषा में अलंकारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि सादृशमूलक अलंकारों का अधिक प्रयोग हुआ है। 'पद्मावत' काव्य की रचना फारसी की मसनवी शैली में की गयी है। कथा का खण्डों में विभाजन, कथा के आरम्भ में खुदा की स्तुति, मुहम्मद आदि पैगम्बरों की प्रार्थना और वर्णन की अधिकता आदि सब कुछ मसनवी शैली के अनुसार है। सामान्य सरल भाषा एवं शैली की दृष्टि से कवि पूर्णरूपेण सफल है, शैली में भावात्मकता एवं प्रसाद गुण विद्यमान है।

6. छन्द एवं अलंकार विधान- दोहा चौपाई वाली प्रबन्धात्मक शैली अपनाते हुए कवि ने सरस काव्य लिखकर, जन मानस को रससिक्त किया है।

कवि ने अपनी कविता में अलंकार लाने का प्रयास नहीं किया है। अतिशयोक्ति, उपमा रूपक, उत्प्रेक्षा एवं अनुप्रसादि अलंकार स्वतः ही इनके काव्य में आ गये हैं। भावाभिव्यक्ति में कवि के अलंकार सहायक ही हुए हैं बाधक नहीं।

मानसरोदक खण्ड(व्याख्या भाग)

1.

एक देवस कौनिउँ तिथि आई । मानसरोदक चली न्हाई ।१।
पदमावति सब सखीं बोलाई । जनु फुलवारि सबै चलि भाई ।२।

कोइ चंपा कोइ कुंद सहेलीं । कोइ सुकेत करना रस बेलीं ।३।
 कोइ सुगुलाल सुदरसन राती । कोइ बकौरि बकच्युन विहँसाती ।४।
 कोइ सु बोलसरि पुहुपावती । कोइ जाही जूही सेवती ।५।
 कोइ सोनजरद जेउं केसरि । कोइ सिंगारहार नागेसरि । ६ ।
 कोइ कूजा सदबरग चँबेली । कोइ कदम सुरस रस बेली ।७।
 चलीं सबै मालति सँग फूले कँवल कमोद ।
 बेधि रहे गन गंधप बास परिमलामोद ॥१॥

भावार्थ:-

(१) एक दिन कोइ (पाठान्तर पूनों की) तिथि आई और पद्मावती मानसरोवर के जल में नहाने चली । (२) उसने सब सखियाँ बुलाई वे सब खिली फुलवाड़ी की तरह आई । (३) कोइ सखी चम्पा, कोइ कुन्द, कोइ केतकी, कोइ करना, कोइ रसबेल की भाँति थी (४) कोइ लाल गुलाल (एक फूल) या सुदर्शन जैसी थी। कोइ गुलबकावली के गुच्छों के समान विहँसती थी । (५) कोइ मौलसिरी की भाँति पुष्पों से लदी थी, कोइ जाति और कोइ यूथिका एवं सेवती के पुष्पों की भाँति थी। (६) कोइ सोनजरद कोइ केसर के समान थी, कोइ हरसिंगार और नागकेशर जैसी थी। (७) कोइ कूजा के फूल, कोइ हजार गेंदा और कोइ चमेली जैसी थी। कोइ कदम्ब या सुन्दर रसबेल जैसी थी । (८) वे सब मालती के साथ चलीं मानों कमल के साथ कोकाबेली फूली हों (९) उनके सुन्दर सौरभ से भौरों के समूह वहीं बिंध गए ।

2.

खेलत मानसरोवर गई । जाइ पालि पर ठाढ़ी भई ।१।
 देखि सरोवर रहसहिं केली । पदमावति सौ कहहिं सलेली ।२।
 ऐ रानी मन देखु बिचारी । एहि नेहर रहना दिन चारी ।३।
 जौ लहि अहे पिता कर राजू । खेलि लेहु जौं खेलहु बाजू ।४।
 पुनि सासुर हम गौनब काली । कित हम कित एह सरवर पाली १५१
 कित आवन पुनि अपने हाथों । कित मिलिकै खेलब एक साथी । ६।

सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेहीं । दारुन ससुर न आवे देहीं ।७।

पिउ पिचार सब ऊपर सो पुनि करै दहुँ काह ।
कहुँ सुख राखे की दुख दहुँ कम जरम निबाह ॥२॥

भावार्थ:-

(१) क्रीड़ा करती हुई वे मानसरोवर पर गई, और जाकर उसके पाल (किनारे) पर खड़ी हो गई । (२) सरोवर की सुन्दरता देख वे सहेलियाँ कीड़ा के लिये रहने लग और पद्मावती से बोलीं- (३) 'हे रानी, मन में विचार कर देखो, यहाँ पिता के घर चार दिन का रहना है (४) जब तक पिता का राज है, जो खेलना चाहो आज मन भर कर खेल लो (५) फिर कल हम सब ससुराल चली जायँगी । फिर कहाँ हम और कहाँ यह सरोवर की पाल ? (६) फिर आना अपने हाथ कहाँ और कहाँ एक साथ मिलकर खेलना ? (७) सासु और ननद बोलियों की मार से प्राण ले लेंगी और कठोर ससुर आने न देंगे ।

प्यारा प्रियतम इन सबसे ऊपर होता है। वह भी न जाने कैसा व्यवहार करेगा (९) न जाने सुख से रखेगा, या दुःख से ? न जाने कैसे जन्म भर निर्वाह होगा !

3.

सरवर तीर पदुमिनी आई । खोंपा छोरि केस मोकराई ।१।
ससि सुख अंग मलैगिरि रानी । नागन्ह झाँपि लीन्ह अरघानी ।२।
श्रोनए मेघ परी जग छाहाँ । ससि की सरन लीन्ह जनु राहाँ । ३।
छपि गै दिनहि भानु कै दसा । ले निसि नखत चाँद परसा ।४।
भूलि चकोर दिस्टि तहुँ लावा । मेघ घटा महुँ चाँद दिखावा ।५।
दसन दामिनी कोकिल भाष । भौहें धनुक गगन लै राखी ।६।
नैन खँजन दुइ केलि करेहीं । कुछ नारंग मधुकर रस लेहीं ।७।
सरवर रूप बिमोहा हिँ हिलोर करेइ ।
पाय छुवै मकु पाव तेहि मिस लहरें देइ ॥३॥

भावार्थ:-

(१) वे पद्मिनी बालाएँ सरोवर के तौर पर आईं। उन्होंने केशों का बँधा हुआ जूड़ा खोलकर बालों को चिथुरा दिया। (२) रानी पद्मावती का मुख चन्द्र के समान और देहयष्टि मलयगिरि के समान थी। केश रूपी नागों ने मानों सुगन्धि के लिये उसके अंग को ढक लिया था। (३) केशों के रूप में मेघों के छा जाने से संसार में जैसे छाँह हो गई। मुख के चारों ओर केशों की ऐसी झाँझ पड़ रही थी मानों काला राहु चन्द्रमा की शरण में आ गया था। (४) केशों की श्यामता से दिन में ही सूर्य का प्रकाश छिप गया और रात में चन्द्रमा नक्षत्रों को लेकर प्रकट हो गया। (५) चकोर भी भूलकर उधर देखने लगा मानों मेवों की घटा के बीच उसे चाँद दिखाई पड़ा हो। (६) पद्मावती के दाँत बिजली की भाँति चमकते थे और बोलना कोयल की भाँति था। आकाश के इन्द्रधनुष को लेकर मानों उसकी भाँति बनाई गई थीं। (७) उसके नेत्रों के रूप मानों दो खञ्जन क्रीड़ा कर रहे थे श्याम अग्रभाग युक्त स्तन ऐसे थे जैसे नारंगियों पर बैठकर भौरै रस पान कर रहे हों।

(८) उसके रूप से मोहित हुआ सरोवर हृदय में हिलोर लेने लगा। (९) मैं कदाचित् उसके पैर छू सकूँ, इस इच्छा से वह अपनी लहरें उसकी ओर बढ़ाने लगा

अभ्यास प्रश्न

1. भक्तिकाल के उद्भव और विकास पर प्रकाश डालिए?
2. भक्तिकाल को स्वर्णयुग क्यों कहा जाता है?
3. जायसी की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए?
4. मानसरोवर खंड का सारांश एल